ISSN
(Print) 2320 – 6446, (Online) 2320 – 8341

सन्त रविदास की कविताओं में व्यंजित सामाजिक चेतना

प्रतिमा ज्योति
शोध छात्रा, हिन्दी विभाग, काशी हिन्दू वि0 वि0, वाराणसी, उ0प्र0।

किसी भी महान व्यक्तित्व को सम्पूर्णता में समझने के लिए तीन बातों का ध्यान रखना पड़ता है। पहला, उस व्यक्ति के जन्म के पूर्व की सामाजिक, धार्मिकादि परिस्थितियां जिनका उस पर प्रभाव पड़ा है। दूसरा, उसके जीवनकाल की परिस्थितियां जिनसे वह संघर्ष और मुठभेड़ करता हुआ आगे बढ़ा है। तीसरा, उसकी मृत्यु के बाद की स्थितियां जिससे पता चले किं उसके उपदेश एवं निर्देश समाज को कितने गहराई तक उद्वेलित कर सके है।

इन्हीं तीन बातों के परिप्रेक्ष्य में यदि हम सन्त रविदास के व्यक्तित्व को रखते हैं तो वे समतामूलक समाज के सच्चे हिमायती एवं मानव कल्याण के सच्चे उपदेशक दिखायी देते हैं। सन्त रविदास जी का जन्म काशी में महड्डीह नामक स्थान पर माघीपूर्णिमा संवत 1433 वि0 को एक चमार परिवार में हुआ था। सन्त रविदास ने जिन परिस्थितियों में जन्म लिया उस समय समाज वर्णवाद–जातिवाद, अस्पृश्यवाद, एवं ऊँच नीच की भावना से' ग्रस्त था। समाज में अनादर, अपमान, घृणा, हिंसा, अशिक्षा, गरीबी एवं धर्म आधारित शोषण विद्यमान था।

रविदास भी समाज के निचले पायदान से आने के कारण तथाकथित निम्न जाति के लोगों के साथ शताब्दियों से होते आ रहे घृणा, अशिक्षा, दरिद्रता, शोषण के इतिहास से परिचित थे। उन्होनें यह समझ लिया कि इस शोषण का आधार धर्म, पाखण्ड, एवं अन्धविश्वास है। इसलिए उन्होनें कहा कि जो धर्म व्यक्ति को पराधीन बनाता है वह उसका ही नहीं अपितु उसके जाति के किसी भी व्यक्ति का धर्म नहीं हो सकता। रविदास ने लिखा –

पराधीनता पाप है जान लेहु रे मीत।
रैदास प्राधीन सो कौन करै है प्रीत।।
पराधीन को दीन क्या, पराधीन वे दीन।
रैदास दास प्राधीन को सबहि समझें हीन ।।

रविदास जानते थे कि यह पराधीनता की स्थिति धर्म के नियन्ताओं द्वारा निर्मित समाज व्यवस्था की देन है, जिसका आधार वर्ण व्यवस्था है। अतः रविदास ने अपनी कविताओं के माध्यम से वर्ण व्यवस्था का प्रबल विरोध किया और वर्ण व्यवस्थाओं के निर्माताओं को मूर्ख करार देते हुए लिखा है–

रैदास एक बूंद सौ, सब ही भयो वित्थार ।
मूरिख हौं जो करत हों, वरन अवरन विचार।।

इस प्रकार सन्त रविदास सदियों से चली आ रही पाखण्डवाद पर आधारित वर्णव्यवस्था को नकार देते है। रविदास जी ने आगे भी स्पष्ट किया कि एक ही बूदं से जन्म लेकर भी एक व्यक्ति ऊँचा हो जाता है, दूसरा नीचा हो जाता है। ऐसा कैसे संभव है ? रविदास का यह प्रश्न हमारी सम्पूर्ण चेतना को झकझोर देता है और उत्तर की मांग करता है–

रैदास एक ही नूर ते जिमि उपज्यों संसार।
ऊँच नीच किहि विधि भए ब्राह्मण और चमार।

इसी प्रकार सन्त रविदास सामाजिक एवं धार्मिक अन्याय की पीड़ा को महसूस करते हुए मानवीय पीड़ा और संवेदना को अपने कविताओं के माध्यम से प्रकट करते हैं। मानवता के सर्वोच्च सिद्वान्त को प्रतिपादित करते हुए रविदास कहते हैं कि किसी जाति विशेष में जन्म लेने के कारण कोई व्यक्ति ऊँच या नीच नहीं हो सकता है। क्योंकि मनोवांछित जन्म लेना तो किसी के भी वश में नहीं है। लेकिन इस संसार में अच्छे बुरे काम तो मनुष्य स्वंय करता है फिर क्यों नहीं इसी कर्म को मनुष्य के ऊँच–नीच होने का आधार बनाया जाता है। रविदास कहते हैं–

ISSN
(Print) 2320 – 6446, (Online) 2320 – 8341

रैदास जन्म के कारणे होत न कोई नीच।
नर को नीच करिडारि है औछे करम की कीच।।

आगे भी रविदास वर्ण एवं जाति की महत्ता को आधारहीन बताते हुए सिर्फ व्यक्ति के ज्ञान को ही महत्वपूर्ण मानते हैं। रविदास का मानना है कि गुण और ज्ञान से विहीन व्यक्ति की पूजा नहीं होना चाहिए चाहे वह ब्राह्मण ही क्यों न हो तथा पुनः गुण और ज्ञान में प्रवीण हर व्यक्ति की पूजा होनी चाहिए, चाहे वह चाण्डाल या किसी भी जाति का हो। उन्होने लिखा है–

रविदास ब्राह्मण मत पूजिये, जऊ होवे गुनहीन।
पूजहि चरन चाण्डल के, जऊ होवे गुन परवीन।।
रविदास चमार उस्तति कर हरि, कौरति निमिख इकगाई।
पतित जाति उत्तम भया, चारिबरन पगे लागि आई।।

वस्तुतः वर्ण, जाति, छूआछूत, गरीबी, अशिक्षा, घृणा, अपमान एवं हिंसा से ग्रस्त समाज से निकलने की छटपटाहट सन्त रविदास की लेखनी में दिखायी पड़ती है। वह एक ऐसी सामाजिक व्यवस्था की कल्पना करते हैं जहाँ छोटे बडे सभी मनुष्यों को समानता का अधिकार हो और जहाँ सबकी रोटी, कपड़ा और मकान की जरूरत पूरी हो जाय। किसी व्यक्ति को या किसी मानव समूह को जाति, धर्म और वर्ण के आधार पर उसके मानवीय अधिकारों से वंचित न किया जाय। वह लिखते है–

ऐसा चाहों राज मैं, जहाँ मिलै सबन को अन्न।
छोट बड़ौ सब सम बसै, रैदास रहे प्रसन्न ।।

निः सन्देह सन्त रविदास द्वारा कल्पित यह उक्त व्यवस्था पूरी तरह से लोकतान्त्रिक एवं गणतान्त्रिक हैं जो समता, स्वतंत्रता एवं बन्धुता पर आधारित है, और वर्तमान समय में देश में प्रचलित संवैधानिक व्यवस्था का समर्थन करती है।

वस्तुतः रविदास की मनोमूलक दृष्टि समतामूलक समाज की स्थापना हेतु प्रेरणदायक है। वह भलीभाति जानते है कि समाज के केन्द्र में व्यक्ति रहता है तथा उसके सम्बन्धों द्वारा उसका विस्तार होता है। इसलिए केन्द्र को मजबूत करने से परिवार, समाज, राष्ट्र व विश्व स्वतः मजबूत बन जाता है। वे व्यक्ति के मन को परिवर्तित कर एक विवकेशील, ज्ञानयुक्त, आध्यात्मिक एवं तर्किक समाज का निर्माण करना चाहते थे, जिसमें वर्ण व्यस्था, जाति व्यवस्था, एवं असमानतापूर्ण व्यवस्था न रहे। फलतः समतामूलक व्यवस्था की स्थापना हो सके। वे व्यक्ति से व्यक्ति के मन को जोड़कर समतामूलक समाज बनाना चाहते थे क्योंकि व्यक्ति का सुधरा मन ही समाज का निर्माता और सुधारक हो सकता है।

निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि भारतीय समाज की जटिलताओं, अवैज्ञानिक मान्यताओं तथा वाह्याडम्बरों के बीच फैली हिंसा, घृणा, द्वेष और वैषम्य के माहौल में सन्त रविदास की कविता यह विश्वास दिलाती है कि मानव कल्याण उसके कर्म एवं वैज्ञानिक सोच से ही संभव है। साथ ही सन्त रविदास की कविताओं में व्यंजित सामाजिक चेतना नवीन जीवन दृष्टि बोध से सामाजिक परिवर्तन की भावभूमि तैयार करती है।

सन्दर्भ

1– हिन्दी कविता मे दलित चेतना : एक अनुशीलन, डा. जयन्ती माकडिया, आकाश पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, गाजियाबाद पृ062।
2– मेरा दलित चिन्तन, डा एन सिंह, कन्चन प्रकाशन, दिल्ली पृ0 44 ।
3– सन्त काव्य, डा0 वीरेन्द्र कुमार पाण्डेय, सपना आलोक प्रकाशन वारणसी, पृ0 157।
4– मेरा दलित चिन्तन, डा एन सिंह, कन्चन प्रकाशन, दिल्ली पृ0 45 ।
5– प्रचीन भारत का इतिहास तथा संस्कृति, के0सी0 श्रीवास्तव, यूनाइटेड बुक डिपों, इलहाबाद ।